Research Reinforcement | A Peer Reviewed International Refereed Journal | ISSN 2348-3857
Vol. 9, Issue 2 | November 2021 - April 2022 | pp. 176-180

संजीव के कथा-साहित्य में समकालीन यथार्थ

विनोद कुमार मीणा

शोधार्थी, राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

डॉ. अनिता वर्मा

शोध पर्यवेक्षक, राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

शोध सारांश

संजीव ने अपने कथा-साहित्य में समकालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक जो भी तत्कालीन यथार्थ समस्याएँ थी, उनका अपने कथा-साहित्य में यथार्थ अंकन प्रस्तुत किया है। समकालीन समाज का यथार्थ अनेक रूपों में प्रस्तुत किया है। संजीव ने अपने उपन्यासों व कहानियों में समाज की अति भयंकर समस्याओं जैसे सामंती-मूल्यों की विद्रूपताएँ तथा वेश्यावृत्ति, उच्च वर्ग द्वारा निम्न वर्ग के अधिकारों का शोषण हो इन तत्कालीन ग्रामीण समस्याओं को लेकर लेखन कार्य किया है। ग्रामीण के साथ-साथ शहरी व आदिवासियों की समस्याएँ हो चाहे नक्सलवाद की गम्भीर समस्या हो इन सभी विषयों को अपने कथ्य का विषय बनाकर अपने कथा-संसार को यथार्थता के साथ प्रस्तुत किया है। अत: संजीव ने अपने कथा-साहित्य में तत्कालीन समाज की यथार्थ समस्याओं का अतियथार्थ रूप से प्रस्तुतीकरण किया है। तत्कालीन समस्याओं को नए रूपों में कौशलपूर्वक अभिव्यक्त किया है। संजीव का कथा-साहित्य गम्भीर विवेचन की माँग करता है, ताकि समकालीन यथार्थ का हर पहलू उभर कर सामने आ सके। संजीव की आस्था न तो भारतीय सामाजिक व्यवस्था में है और न मौजूदा तंत्र पर ही। स्वतंत्र भारत का तंत्र परतंत्र भारत का ही तंत्र है। ऐसी स्थिति में यथार्थ को इकहरी दृष्टि से देखना यथार्थ को सही समझना नहीं हो सकता। उसकी अनेक परतें होती है और संपूर्णता में यथार्थ को सही समझना कथाकार के जीवन के प्रति एक गहरी और संलग्न दृष्टि की अपेक्षा रखती है। संजीव अपनी अनेक कहानियों में यथार्थ की विभिन्न परतों को खोलते हैं और वास्तविक यथार्थ से पाठकों को परिचित भी कराते हैं। स्वातंत्र्योत्तर भारत में जमींदारी प्रथा समाप्त हो चुकी है, लेकिन सामंतवादी प्रवृत्ति जली हुई रस्सी की तरह विद्यमान है।

संकेताक्षर— *नक्सलवाद, आदिवासी, बाजारवाद, समकालीन, यथार्थ*

प्रस्तावना

समकालीन कथा साहित्य में समकालीन भारतीय समाज का यथार्थ अनेक रूपों में व्यक्त हुआ है और जिन कथाकारों ने इस यथार्थ से अपने को विलग नहीं किया उनमें संजीव प्रमुख है। संजीव के कथा साहित्य में एक साथ यथार्थ की प्रस्तुति और यथार्थ की रचना दोनों हैं। यहाँ यथार्थ की रचना के यथार्थ पर भी ध्यान देना इसलिए आवश्यक है कि कोई भी रचना यथार्थ की प्रस्तुति भर नहीं होती। यथार्थ रचना में पुनर्प्रस्तुत होकर एक नई शक्ल और आभा के साथ उपस्थित होता है। यथार्थ की प्रस्तुति और यथार्थ की रचना में अन्तर है। यथार्थ की प्रस्तुति भी कभी-कभी आवश्यक हो जाती है, क्योंकि समकालीन भारतीय समाज में यथार्थ को प्रस्तुत तथा व्यक्त करना भी आवश्यक था। इस दृष्टि से रचना के सच से सच की रचना का कार्य समकालीन हिन्दी कहानी का एक प्रमुख अभिलक्षण है। भारत का समकालीन यथार्थ स्वतंत्रतापूर्वक भारतीय यथार्थ से अपने मूल तथा गुणात्मक रूप से भिन्न नहीं है। समकालीन हिन्दी कथाकारों के यहाँ नियति के साक्षात्कार से कहीं अधिक स्थिति का साक्षात्कार महत्त्वपूर्ण है।

संजीव की 'पुन्नी माटी' मांद, प्रेतमुक्ति, पिशाच आदि कहानियों में क्षरित सामंती मूल्यों की विद्रूपताओं को परत-दर-परत उघाड़ती है एवं उसकी कारूणिक परिणति का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती है। 'पुन्नी माटी' में जागीरदार श्रीधर राय की बेटी शिखा इंपीरियल कम्पनी में रिशेप्सनिस्ट है। श्रीधर राय अपनी बेटी के सम्बन्ध में सब कुछ नहीं जानते। वेश्याओं की मौसी श्रीधर राय को बताती है कि उनकी बेटी शिखा 'रिशेप्सनिस्ट' की आड़ में मालदार पार्टियों को खुश करती है। वह कहती है- ''यकीन न आए तो दफ्तर के चपरासी से पूछ लीजिए या कहिए तो हमीं कोई व्यवस्था कर दें सच्चाई से साक्षात्कार के लिए।''[1] श्रीधर राय की जमींदारी चली गई है पर उनकी ऐंठ नहीं गई है- ''जमींदारी गई तो गई, रौब कैसे जा सकता है जमींदारों का। हाथी के मरने पर भी उसकी कीमत नब्बे हजार रूपये होती है।''[2] 'प्रेतमुक्ति' कहानी में रस्तोगी साहब कहते हैं- ''इस पूरे इलाके की सूखी फसलें, सूखे इंसान, मरियल मवेशी और इनका दयनीय परिवेश सिर्फ इस वजह से है कि जिनके पास ताकत और पैसा है, उन्होंने इसे व्यक्तिगत संपत्ति बना रखा है।''[3] 'पिशाच' कहानी में भूमिहीन हो जाने के बावजूद महातम बाबा सामंती संस्कारों से मुक्त नहीं हो पाते है। उन्हें दुःख इस बात का है कि ''कोई पुतरा वैलगी नहीं करता...बाबूलाल बाभन होई के हर जोतता है,.....उनके लड़के रमेशर की रहलुअई करते है....ससुरे नीच जाति को खाट पर बैठाई लेते है।''[4] 'भूखे रीछ' का रामलाल सामंतों के भय से गाँव वापस नहीं जाना चाहता है- ''नहीं-नहीं आयेगा वह गाँव। अपने ही दरवाजे पर बामन ठाकुरों के सामने खाट पर बैठना नहीं हो पाता है वहाँ। अब तो माटी को गंगा नहीं दामोदर ही बड़ा है।''[5]

इस तरह यथार्थ को समझने के लिए कथाकार के पास वैज्ञानिक दृष्टि और अन्तर्दृष्टि का होना आवश्यक है। नामवर सिंह के अनुसार ''यथार्थ को समझने के लिए जब तक एक अच्छी वैज्ञानिक साफ-सुथरी अन्तर्दृष्टि या जीवनदृष्टि या रचनादृष्टि आपकी नहीं होगी, तब तक आप यथार्थ को चित्रित नहीं कर सकेंगे।''[6]

संजीव के यहाँ वैज्ञानिक दृष्टि के साथ गहरी अन्तर्दृष्टि भी है, जिसके कारण उनकी कहानियों में इकहरापन नहीं है। सत्ता और व्यवस्था की संपूर्ण समझ के अभाव में समकालीन यथार्थ का चित्रण अछूता ही रहेगा। संजीव की कहानियों तथा उपन्यासों में व्यवस्था और सरकार का वास्तविक रूप बार-बार उद्घाटित होता है। उनका अधिकांश कथा-साहित्य में किसी-न-किसी रूप में तंत्र और व्यवस्था पर प्रश्नचिह्न है। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि सातवें दशक के अन्त में भारत में नौ राज्यों में संविदा सरकारों के गठन और नक्सलबाड़ी आंदोलन ने हिन्दी कहानियों को नया स्वर दिया। इस आन्दोलन ने हिन्दी कथा-साहित्य की दिशा बदल दी। नामवर सिंह ने कहा है ''इसने एक कैटेलिक एजेन्ट' के रूप में काम किया।''[7]

संजीव 'अपराध' कहानी से हिन्दी कथा जगत् में रातों-रात प्रसिद्धि पाने वाले कहानीकार की कई कहानियाँ नक्सलबाड़ी आन्दोलन की विचारधारा और समाज के लहू-लुहान यथार्थ से जुड़ी है 'ऑपरेशन जोनाकी, अपराध, शिनाख्त, तिरबेनी का तड़बन्ना' पूत-पूत! पूत-पूत, अवसाद आदि कहानियों में नक्सलबाड़ी आन्दोलन का गतिमय सफर है तो 'अवसाद' इसका डेल्टाई वर्तमान। 'अपराध' कहानी में संजीव ने नक्सलवादी आन्दोलन के समर्थन में इस तंत्र को कटघरे में खड़ा कर दिया है। तो 'पूत-पूत! पूत-पूत' कहानी में यह आन्दोलन ही कटघरे में खड़ा कर दिया है। 'धुंआता आदमी' कहानी में धुंआता आदमी अपने पूरे परिवेश में समाज और समाज के विभिन्न वर्गों और समुदायों के लोगों से खिन्न है। इसका कथन है- ''व्यवस्था को हमने छिनाल बना छोड़ा है, आधी सामंतवाद की रखैल है, आधी उपनिवेशवाद की और इस पर भी मेढ़की की तरह दंभ में फूलते फिरेंगे या इनके घाघ दलाल पूँजीवाद की आंतों में समाकर कीड़ों की तरह कुलबुलायेंगें।''[8]

समकालीन भारतीय यथार्थ की जैसी शक्ल और छवि है, वह नेताओं, मंत्रियों, सेठों, पूँजीपतियों, लुटेरों, अफसरों, माफियाओं की मिलीभगत के कारण निर्मित है। संजीव इसे समझते है और पहचानते भी है इसलिए इनके उपन्यास व कहानियों में भारतीय समाज का यथार्थ अंकन किया है। इनके उपन्यासों में कोयलांचल, जातिवाद, सामंतीवाद, क्रूरता, अनैतिक दुष्कर्मों, ज्योतिष अय्याशी और स्त्रियों, मेहनतकशों का शोषण, दमन, सर्कस में काम करने वाले कलाकारों की व्यथा और ऊपर से सुंदर लगने वाले जीवन की अन्दरूनी कायरता एवं उनके प्रति मालिकों का अनुचित व्यवहार कोयला खदान, फैक्ट्री में काम करने वाले लोगों का शोषण,

ठेकेदार, दलालों की कुटिलताएँ, शोषण तंत्र के नये रूप आदि समकालीन भारतीय यथार्थ को अपने कथा-साहित्य का कथ्य बनाया है। जैसे- 'धार' उपन्यास कोयला क्षेत्र में मजदूरों द्वारा किये गये सहकारिता के प्रयोग की वास्तविक घटना को लेकर लिखा गया उपन्यास है। संजीव लिखते है ''न दिन है न रात, दोनों की दहलीज पर संथाल परगना का पूरा नंगा इलाका घायल गुर्राते सूअर और ताड़ के पेड़ ढेटे की झाड़ियाँ, बंजर धरती, सूखती नदियाँ, सूखते कुएँ, तालाब, भयंकर पोखरिया खादे, जहाँ तहाँ सोये पड़े मुर्दे से लोग हैं कोई जानगुरु (ओझा) जो इन्हें मन्त्र से शापमुक्त कर दे।''[9] इस प्रकार शापग्रस्त प्रदेश और वहाँ की समस्याओं को कथ्य बनाया है। आदिवासी कैसे गरीब बनता जाता है। आदिवासियों की गरीबी, भूखमरी, गंदगी, अभाव, नारी देह का खुला व्यापार, बालविवाह, वधूमूल्य, धार्मिक आडम्बर, ओझा का आतंक आदि समकालीन यथार्थ के अति यथार्थ को अपने कथ्य का विषय बनाया है। 'सावधान! नीचे आग है' उपन्यास में भी संजीव ने कोयलांचल की जिन्दगी का व्यापक चित्रण किया है। कोयला खदानों की पूरी व्यवस्था ही लूट और शोषण की है। सारी व्यवस्थाएँ मालिकों के हित में काम करती है। इस तरह संजीव कहानी व उपन्यास विद्या में तत्कालीन अनेक समस्याओं को उजागर करते है।

संजीव ने अपने कथा-साहित्य में तत्कालीन न्याय-व्यवस्था का भी यथार्थ चित्रण किया है। कोई भी समाज अपनी न्याय प्रणाली ठीक किए बगैर अपना विकास नहीं कर सकता। हमारे समाज में मनुष्य को उसकी योग्यता के आधार पर नहीं उसके जन्म, परिवार, धन-संपदा, रंग और जाति के आधार पर जाना जाता है। न्याय-प्रणाली के ठीक न होने के कारण ही बेईमानों और अपराधियों को सजा नहीं मिल पाती। 'अपराध' कहानी में सिद्धार्थ के पिता न्याय को 'सत्य सापेक्ष' न मानकर 'तथ्य सापेक्ष' मानते हैं। उनके अनुसार तथ्य का प्रमाण स्वयं में सामर्थ्य सापेक्ष है। यह सामर्थ्य समाज के गिने-चुने व्यक्तियों के पास है। समाज में न्याय-व्यवस्था के सही न होने से ही अनेक विसंगतियों और बुराईयाँ जन्म धारण करती है। 'घर चलो दुलारी बाई' कहानी में दुलारी बाई का लड़का ददिहाल और ननिहाल की संपत्ति का वारिस है, पर उसके बच्चे की हत्या हो जाती है। इसके बाद उसके पति की भी हत्या हो जाती है। ये हत्याएँ जमीन-जायदाद के लोभ में होती है। दुलारी बाई मुकदमा दायर करती है परन्तु वह हार जाती है उसे न्याय नहीं मिलता है। 'कुछ तो होना चाहिए न' कहानी का वृद्ध यात्री भी खुद को जीवित प्रमाणित करने के लिए न्यायालय के चक्कर लगाता हैं, जिसे झूठे मुकदमे में जेल भेजकर उसके हमनाम को नौकरी दे दी गई है।

संजीव के कथा-साहित्य में आरंभ से लेकर आज तक समाज में व्याप्त गतिरोध को तोड़ने का सर्वकश प्रयत्न है और इसी से आलोचक रवि भूषण ने उन्हें 'बेचैन कथाकार' कहा है। यथार्थ के चित्रण के लिए संजीव गाँव, कस्बा, नगर, महानगर- सबको अपनी कहानियों तथा उपन्यास का विषय बनाते हैं, जिससे किसी स्थान विशेष का वह यथार्थ पूरे देश और समाज का यथार्थ बन जाता है। संजीव के विस्तृत कथाफलक में आदिवासी जनजीवन गिरिजन और सागर अंचल का जनजीवन सब समाहित है। 'तीस साल का सफरनामा' कहानी के पात्र सुरजा को 'एक चलता फिरता दस्तावेज' माना है। वस्तुतः संजीव की कहानियाँ भी स्वातंत्र्योत्तर भारत का 'चलता फिरता दस्तावेज है।' उनकी कई कहानियाँ 'जसी बहू', प्याज के छिलके, प्रेतमुक्ति, महामारी, घर चलो दुलारीबाई, दो बीघे जमीन, कद्र, तिरबेनी का तड़बन्ना तथा पूत-पूत! पूत-पूत कहानियाँ ग्रामीण यथार्थ के चित्र प्रस्तुत करती है। संजीव ने कहानियों के साथ उपन्यास विद्या में भी समकालीन ग्रामीण यथार्थ को प्रस्तुत किया है। 'जंगल जहाँ शुरू होता है' उपन्यास में लेखक ने उत्तर प्रदेश और नेपाल से लगे बिहार के सीमावर्ती बेतिया जिले के जन-जातीय क्षेत्र में डाकू समस्या के बहाने वहाँ की सारी स्थितियों एवं परिस्थितियों की छानबीन करने की कोशिश की है। संजीव लिखते हैं- ''यहाँ कि विशिष्ट भूगोल, यहाँ की परजीवी, सामंती व्यवस्था, यहाँ के मारवाड़ी महाजनों का उपनिवेश किसी भी दरवाजे से आइए, आपको यहाँ डाकू बैठा मिल जाएगा।''[10] इस उपन्यास में मानव द्वारा मानव के विनाश, उत्पीड़न, दमन, संस्कृति के विकृत मूल्य व मूल्यहीन राजनीति को केन्द्र में रखा है। संजीव ने सामाजिक, आर्थिक विषमता, मूल्य मूढ़ता, अलगावपन, टूटन, घुटन, संत्रास, भय, राजनीतिक, मूल्यहीनता, अवसरवादिता, अनुशासनहीनता, भ्रष्टाचार आदि महत्त्वपूर्ण प्रश्नों को प्रस्तुत उपन्यास में कथ्य बनाया है। उस आँचल में सत्ता समीकरण जाति से प्रभावित है डाकू यहाँ ऊपर से थोपी समस्या नहीं अपितु यहाँ के प्राकृतिक, सामाजिक और राजनीतिक परिवेश की उपज है। 'सर्कस'

उपन्यास में भी संजीव ने उपेक्षित कलाकारों की व्यथा और सर्कस की अन्दरूनी दुनिया को कथ्य के रूप में उठाया है। संजीव ने सर्कस की दुनिया का भूगोल, अन्तर्विरोध, सर्कस मालिकों की कुटिलताएँ, कलाकारों की उपेक्षा, शोषण एवं त्रासदी को गहराई से चित्रित किया है।

भारत के समकालीन यथार्थ को समझने के लिए मध्यवर्ग को समझना जरूरी है। यह वर्ग अपनी कथनी और करनी में अब कहीं से भी एकरूप नहीं है। संजीव के कथा-साहित्य में इस मध्यवर्ग के चित्र है। 'लोड-शेडिंग' कहानी का छोटा-सा परिवार कथावाचक के अनुसार- ''सह अस्तित्व के उस दौर में है, जहाँ सह-अस्तित्व गौरव नहीं मजबूरी बन चुका है और विभिन्न ग्रहों की तरह बिना एक-दूसरे से टकराये हम अपने-अपने कक्षों में विचर रहे हैं।''[11] समकालीन यथार्थ को उसके पूरे विस्तार और बुनावट को समझने के लिए भी संजीव नये कथा क्षेत्रों की तलाश करते हैं। मैदानी इलाकों की कहानियाँ हो या पहाड़ों की, गाँवों की कहानियों हो या शहर की, सामंतों की कहानियाँ हो या मजदूरों और परिवर्तनकारियों की संजीव बड़ी गहराई के साथ गतिशील यथार्थ को पकड़ने का एक रचनात्मक उपक्रम करते हैं। अपनी पहली कहानी 'किस्सा एक बीमा कम्पनी की एजेंसी का' से लेकर 'लिटरेचर' तक संजीव यथार्थ को बार-बार पकड़ते है। पिछले पच्चीस वर्ष का यह यथार्थ क्रमश सूक्ष्म होता चला गया है। इस यथार्थ को उसकी गतिशीलता में पकड़ना और उसे रचनात्मक रूप प्रदान करना आज सबसे अधिक कथा-साहित्य में ही सम्भव हो पा रहा है। संजीव के यहाँ यथार्थ अपने तीखे रूप में मौजूद है।

शिक्षित युवकों की बेरोजगारी जैसे यथार्थ को भी संजीव ने अपने कथा-साहित्य में चित्रित किया है। 'वांछित-अवांछित' कहानी का नायक बेरोजगार होने के कारण अपने ही परिवार में अवांछित हो जाता है। 'भूमिका' तथा अन्य कहानियाँ संकलित भूमिका कहानी में गोराई, मन्नान, बंशी आदि ऐसे ही बेरोजगार युवा पात्र हैं। सेठ इनकी बेकारी का फायदा उठाकर उनसे गाँव जलवाने का जघन्य कार्य करवाता है। 'प्रतिद्वन्द्वी' कहानी का नायक नौकरी की तलाश में भटकता हुआ कुंठाग्रस्त हो जाता है। 'हलफनामा' कहानी के नायक को भोंदू सहपाठी जो बाद में सेठ बन जाता है, उसी के अधीन काम करना पड़ता है। 'चाकरी' कहानी का नायक कहता है ''समीकरणों और साजिशों से भरी जिन्दगी जीने की इस अंधी दौड़ में बड़ी मुश्किल से जो मैंने अपने लिए इतनी-सी जमीन तलाशी है।.....मेरे पाँव हटाते ही यहाँ खड़े होने की होड़ ही नहीं मच जायेगी। धक्कम-धक्का और लंगियाँ चलने लगेंगी और कितनों के मुखौटे और कछन्ने पेट गिराये बच्चों से सड़क पर पड़े होंगे।''[12] चाकरी कहानी में बी.एस.सी. पास नायक को छह साल तक नौकरी के लिए भटकने के बाद अन्ततः अपनी ही छात्रा के अधीन मामूली-सी नौकरी करनी पड़ती है।

निष्कर्ष

तत्कालीन आदिवासी समुदाय को ध्यान में रखकर बहुत कम, कहानीकारों ने कहानियाँ लिखी है। संजीव की कई कहानियों में आदिवासी जीवन का यथार्थ, उनका समाज, उनके रीति-रिवाज तथा उनके जीवन में होने वाले नाना-परिवर्तनों को देखा गया है। ऐसी कहानियों में आप यहाँ है, ऑपरेशन जोनामी, दुनिया की सबसे हसीन औरत, टीस, जीवन के पार और लिटरेचर प्रमुख हैं। 'लिटरेचर' कहानी में सेठ आदिवासियों के वानस्पतिक और औषधीय ज्ञान को तो कैश करता ही है, इसके अलावा वह उनके विवेक पर भी कब्जा करने के लिए तरह-तरह के षड्यंत्र करता है। 'जीवन के पार' कहानी में दिखाया गया है कि एक हद तक सुरक्षित समझी जाने वाली आदिवासी संस्कृति और उसकी अस्मिता अपनी ही रुढ़ियों और पूंजीवादी हमले के कारण तार-तार हो रही है। 'पाँव तले की दूब' उपन्यास में भी झारखण्ड के मेझिया क्षेत्र के गाँव बाघामुंडी के आदिवासी लोगों का यथार्थ चित्रण किया है। इस उपन्यास में पंचपहाड़ के आदिवासी ने झारखण्ड मुक्ति आन्दोलन अपनी अस्मिता और अपनी जमीन को पूंजीपतियों, दलालों, ठेकेदारों के चंगुल से छुड़ाने के लिए शुरु किया था। 'राष्ट्रीयताप विद्युत संस्थान डोकरी' के लिए आदिवासियों को अपनी जमीन से विस्थापित होना पड़ा।[13]

अतः संजीव ने अपने कथा-साहित्य में तत्कालीन समाज की यथार्थ समस्याओं का अतियथार्थ रूप से प्रस्तुतीकरण किया है। तत्कालीन समस्याओं को नए रूपों में कौशलपूर्वक अभिव्यक्त किया है। संजीव का कथा-साहित्य गम्भीर विवेचन की माँग करता है, ताकि समकालीन यथार्थ का हर पहलू उभर कर सामने आ सके।

ISSN 2348-3857

सन्दर्भ सूची

1. संजीव, संजीव की कथा-यात्रा: पड़ाव, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2008, पृ.सं. 128
2. संजीव, संजीव की कथा-यात्रा: पड़ाव, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2008, पृ.सं. 130
3. संजीव, कहानी-प्रेतमुक्ति, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2008, पृ.सं. 323
4. संजीव, कहानी- पिशाच, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2008, पृ.सं. 311
5. संजीव, कहानी-भूखे रीछ, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2008, पृ.सं. 97
6. संपादक-डॉ. गिरीश काशिद, डॉ. जाश्री शिंदे, पुस्तक - संजीव जनधर्मी कथाशिल्पी, दिव्य डिस्ट्रिब्यूटर्स, कानपुर, पृ.सं. 33
7. संपादक-डॉ. गिरीश काशिद, डॉ. जाश्री शिंदे, पुस्तक - संजीव जनधर्मी कथाशिल्पी, दिव्य डिस्ट्रिब्यूटर्स, कानपुर, पृ.सं. 33
8. संजीव, संजीव की कथा-यात्रा: पड़ाव, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2008, पृ.सं. 79
9. संजीव, उपन्यास-धार, राधाकृष्ण प्राइवेट लिमिटेड द्वारा, संस्करण-2018,
10. संजीव, उपन्यास-जंगल जहाँ शुरु होता है, राधाकृष्ण प्राइवेट लिमिटेड द्वारा, संस्करण-2019
11. संजीव, संजीव की कथा-यात्रा: पड़ाव, कहानी-लोड शेडिंग, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,संस्करण-2008, पृ.सं. 186
12. संजीव, संजीव की कथा-यात्रा: तीसरा पड़ाव, कहानी-जीवन के पार, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,संस्करण-2008, पृ.सं. 126
13. संजीव, उपन्यास - पाँव तले की दूब, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, संस्करण-2016